लव जेहाद

पत्रकार-कवि फिरोज खान की कविता

(एक)

वे घने ऊँचे लहराते दरख्तों वाले शहर थे
टोलों और मुहल्लों वाले
मुहल्लों में घर थे
घरों की छतें थीं
छतों पर मुंडेरें
मुंडेरों के दरमियाँ से उठती थीं पतंगें
और आसमान में बना देती थीं कोई इंद्रधनुष
माँजों की बाहें थामे तैरती रहती थीं आसमानों में
देर तलक

पतंगें दोस्त थीं
दुश्मन भी
दुश्मनी ऐसी न थी कि काट दें किसी का मांजा तो धड़ाम से गिरा दें नीचे
हारी हुई पतंगें ऐसे लहराके गिरती थीं
जैसे कोई मीरा अपने किशन की मूरत के सामने तवा ? करती आती हो

(दो)

शहर में मुहल्ले थे
मुहल्लों में जातियाँ थीं, धरम थे
मस्जिदें थीं, मंदिर थे मुहल्लों में
घर थे, घरों की छतें थीं
छतों पर मुंडेरें थीं
लेकिन मुंडेरों के कोई मजहब नहीं थे

मुंडेरों पर थे दीवाने
और थीं सपनीली आँखों वाली लड़कियाँ
लड़कियों की मुंडेरों पर गिरती थीं पतंगें
और जब चूम लेती थीं उनके कदम
तो जीत जाते थे हारे हुए दीवाने पतंगबाज

पतंगें जो बन जाती थीं प्रेमपत्र
प्रेम में इस तरह गिरने को ही शायद कहते होंगे
फॉल इन लव
गिरना हमेशा बुरा नहीं होता

(तीन)

वे अब झुलसे हुए वीरान दरख्तों वाले शहर हैं
शहरों में मुहल्ले हैं
हिन्दू मुहल्ले हैं
और मुसलमान मुहल्ले
मुहल्लों में घर हैं
घरों में हिन्दू हैं या मुसलमान
छतों पर मुंडेरें हैं
मुंडेरों पर पतंगों का खून
माँजों से बंधी हैं तलवारें
और आसमानों में चल रहा है कत्लेआम
माशूक लड़कियों की आंखों में अब चमकीले बेखौफ सपने नहीं हैं
दीवाने बदहवास हैं
वे जेहादी हैं या हैं रोमियो
लड्कियों के लिए ये दुनिया अब कत्लगाह है

(चार)

इससे पहले कि मेरी गर्दन आपकी कुल्हाड़ी के निशाने पर हो
तड़प रही हो धड़ से अलग किसी विडियो में
इससे पहले कि आपकी नफरत
मेरे मरे जिस्म की बोटी करदे
नारों के बीच आपकी राष्ट्रभक्ति जला दे मुझको
इससे पहले कि हरी घास लहू में डूबे
मेरी चीख तैर जाए फिजा में
तुम्हारा अट्टहास सुने और सहम जाए भेड़िया भी
इससे पहले कि तुम दौड़ो मेरी ओर कुल्हाड़ी लेकर
मैं बता देना चाहता हूँ कि मेरी पार्टनर का नाम रीना है
मैं बता देना चाहता हूँ कि रीना हिंदू नहीं हैं।

जनता के रीयल हीरो वीर चन्द्र सिंह गढ़वाली

देश में आज जिस तरह से सुरक्षा बलों के नाम पर राजनीति की जा रही है, वैसे में चन्द्र सिंह गढ़वाली और 1930 का पेशावर विद्रोह आज और भी ज्यादा प्रासंगिक हो गये हैं।

मुनीष कुमार

23 अप्रैल 1930 का दिन भारत के स्वतंत्रता संग्राम के दौर का ऐतिहासिक दिन है। पेशावर में अंग्रेजी हकूमत के खिलाफ देश की गढ़वाल रेंजीमेंट की बगावत ने अंग्रेजी हुकूमत की चूलें हिलाकर रख दीं। उनकी बगावत हिन्दू-मुस्लिम एकता की अदभुत मिशाल है। अंग्रेजों ने पेशावर में गढ़वाल रेजीमेंट को यह सोचकर तैनात किया था कि हिन्दू सैनिक पेशावर के मुसलमान आंदोलनकारियों पर गोली चलाने में जरा भी नहीं हिचकेंगे, पर ऐसा हुआ नहीं।

उस दिन देश के पेशावर शहर में (जो कि अब पाकिस्तान में है) विदेशी कपड़ों व मालों के विरोध में खान अब्दुल गफ्फार खां के नेतृत्व में पठानों का जुलूस व सभा थी। अंग्रेजी हुकूमत इस आंदोलन को कुचलना चाहती थी। इसके लिए उन्होंने गढ़वाल रेंजीमेंट की बटालियनें तैनात की, जिसका नेतृत्व चन्द्र सिंह गढ़वाली कर रहे थे। आंदोलनकारी पठानों के जुलूस व जोश से तिलमिलाई अंग्रेजी हुकूमत के कैप्टन रिकेट ने उनके आंदोलन को कुचलने के लिए गढ़वाल रेजीमेंट को आदेश दिया- गढ़वाली तीन राउन्ड फायर।

परन्तु गढ़वाल रेजीमेंट के सैनिक तो कुछ और सोचकर आए हुए थे। गढ़वाल रेजीमेंट के सेनानायक वीर चन्द्रसिंह गढ़वाली जो कि कैप्टन रिकेट के बगल में ही खडे थे, अपने सैनिकों से कहा- गढ़वाली सीज फायर। उन्होंने कहा कि हम निहत्थों पर गोली नहीं चलाते। गढ़वाल रेजीमेंट के बहादुर सैनिकों ने गोली चलाने से इंकार कर दिया और सभी सैनिकों ने अपनी बंदूकें नीची कर दीं। मौके पर तैनात दूसरी प्लाटूनों भी इसका अनुसरण किया और गोलियां नहीं चलाईं।

आनन फानन में आंदोलन को कुचलने के लिए कैप्टन रिकेट द्वारा गोरों की फौज मौके पर बुला ली गयी। उन्होंने पठानों पर गोलियां बरसानी शुरु कर दीं। खून की नदियां बहा दीं गयीं, देखते-देखते पेशावर की सड़कें बहादुर पठानों के खून से रंग दी गयी। मार्शल ला व कर्फ्यू लगा दिया गया।

बगावत का मतलब था, मौत की सजा। इसके बावजूद भी गढ़वाल रेजीमेंट के बहादुर सैनिकों ने अपने पठान भाईयों पर गोली चलाने के मुकाबले अंग्रेजी हुकूमत का दमन झेलना स्वीकार किया। बगावत करने वाले सैनिकों के हथियार बैरक में जमा करा लिए गये गये। 67 सैनिकों का कोर्ट मार्शल कर, उन पर राजद्रोह का मुकदमा चलाया गया। मुकन्दी लाल व एक अंग्रेज ने उनके मुकदमें की पैरवी की। 7 सैनिकों के सरकारी गवाह बन जाने के कारण उन्हें छोड़ दिया गया। 17 ओहदेदरों समेत 60 सैनिकों को लम्बी-लम्बी सजाएं सुनायी गयीं। वीर चन्द्रसिंह गढ़वाली को आजीवन कारावास की सजा सुनाई गयी।

चन्द्र सिंह के हाथ-पैरों में बेड़ियां डालकर डेरा इस्माइल खां जेल की काल कोठरी में डाल दिया गया। जेल में भी चन्द्र सिंह ने अपना संघर्ष जारी रखा। बगावत करने वाले सैनिकों को राजनीतिक कैदी का दर्जा दिये व उन्हें बी क्लास की जेल उपलब्ध कराए जाने की मांग को लेकर 1 जुलाई, 1930 से उन्होंने अपने साथियों के साथ जेल में भूख हड़ताल की, परन्तु उनकी मांगें नहीं मानी गयीं। कांग्रेस नेताओं की अपील पर उन्होंने 1 अगस्त 1930 को अनशन समाप्त कर दिया।

1931 में गांधी-इर्विन के बीच हुए समझौते के बाद जेलों में बंद कांग्रेस के नेता रिहा कर दिये गये। सेना में बगावत करने के कारण चन्द्र सिंह व उनके साथियों को रिहा नहीं किया गया। अंग्रेजी हुकूमत ने चन्द्र सिंह से कहा कि तुम माफी मांग लो तो तुम्हें भी रिहा कर दिया जाएगा। चन्द्र सिंह ने जबाब दिया कि आप मुझे बेकसूर समझते हैं तो छोड़ दे। माफी मांगने के लिए तो मैं संसार में पैदा नहीं हुआ। कांग्रेस के नेताओं ने उनकी रिहाई को लेकर कभी भी गम्भीर प्रयास नहीं किए।

चन्द्र सिंह को बरेली, इलाहबाद लखनऊ, अल्मोड़ा समेत कई जेलों में रखा गया। 1936 में नैनी जेल में उनकी मुलाकात कम्युनिस्ट क्रांतिकारी यशपाल व शिव वर्मा आदि से हुयी। उनके सानिध्य में चन्द्र सिंह ने कम्युनिज्म के आदर्शों को ग्रहण किया। 1941 में चन्द्र सिंह को जेल से रिहा कर दिया गया परन्तु भयभीत अंग्रेजी सरकार ने उनके गढ़वाल जाने व भाषण देने पर पाबन्दी लगा दी।

कुछ समय चन्द्र सिंह अपनी पत्नी भगीरथी व बेटी माधवी के साथ गांधीजी के साथ वर्धा में रहे। 1942 में उन्होंने अंग्रेजों भारत छोड़ो आंदोलन में भागीदारी की जिस कारण उन्हें बनारस में पुन: गिरफ्तार कर लिया गया। इस दौरान उनकी पत्नी व बेटी ने हल्द्वानी अनथालय की एक कोठरी में कठिन जीवन व्यतीत किया।

1945 में चन्द्र सिंह को जेल से रिहा कर दिया गया। रिहा हाने के बाद उन्होंने कम्युनिस्ट पार्टी के साथ मिलकर मजदूर-किसानों को संगठित करने के काम में भागीदारी की तथा कम्युनिस्ट पार्टी की सदस्यता ग्रहण की।

1946 में चन्द्र सिंह के गढ़वाल प्रवेश पर लगा प्रतिबंध हटा लिया गया। उन्होंने कुमाऊं व गढ़वाल में भुखमरी की शिकार जनता के लिए अनाज, पानी आदि को लेकर संघर्ष किया। 1947 में देश से अंग्रेजों के देश से जाने के बाद बाद टिहरी रियासत को भारत में विलय के लिए जारी आंदोलन का उन्होंने नेतृत्व किया। इसमें उनके दो साथी नागेन्द्र सकलानी व मूल सिंह शहीद हो गये।

1948 में चन्द्र सिंह ने पौड़ी गढ़वाल से जिला बोर्ड का चुनाव लड़ने का निर्णय लिया। कांग्रेस सरकार को इसकी भनक लगते ही उन्होने चन्द्रसिंह को गिरफ्तार कर बरेली जेल भेज दिया। इस कारण वह अपने 90 वर्षीय पिता की अंत्येष्टि में भी शामिल नहीं हो पाए। उन्होंने जेल से सरकार को चतावनी दी कि यदि 10 दिनों के भीतर उन्हें गिरफ्तारी कारण नहीं बताया गया तो वे जेल के भीतर भूख हड़ताल कर देंगे।

8 अप्रैल, 1948 को सरकार का जबाब आया कि तुम कम्युनिस्ट पार्टी के जोरदार कार्यकर्ता हो, तुम 2/18 गढ़वाल राइफल पेशावर में हुयी गदर के सजायाफ्ता हो, तुमने कुमाऊं डिवीजन के एनआईए वालों को सरकार के विरुद्ध भड़काया.... तुम्हारी हरकतें अमन व राज्यसत्ता के खिलाफ हैंज।

कुछ दिन बाद चन्द्र सिंह को रिहा कर दिया गया। सरकार द्वारा उन पर लगाए गये आरोपों के प्रतिवाद में चन्द्र सिंह ने 10 जून 1948 को 'चन्द्र सिंह गढ़वाली का नम्र निवेदन' नाम से पर्चा छपवा कर बांटा, जिसमें उन्होंने कहा रायल गढ़वाल राईफल को पेशावर का अभियुक्त कहकर उसे गिरफ्तारी का कारण बताना यही बतलाता है कि जिनके विरुद्ध पेशावर का कांड हुआ था, वह चमड़े का रंग बदलकर अब भी मौजूद है।

उनका यह पर्चा समाचार पत्रों की सुर्खियां बन गया तथा इसे लंदन के अखबार डेली वर्कर में भी सुर्खियों के साथ प्रकाशित किया गया। सरकार की फजीहत होने पर प्रधानमंत्री

नेहरु के निजी सचिव ने चन्द्र सिंह को पत्र भेजकर अफसोस प्रकट किया। पेशावर कांड व उसके विद्रोही सैनिकों को आजाद भारत की सरकार मान्यता देने के लिए तैयार नहीं थी।

सरकार ने उन्हीं सैनिकों को पेंशन का हकदार माना, जिन्होंने कम से कम 10 साल फौज में नौकरी की हो। इस तरह चन्द्र सिंह समेत पेशावर के मात्र 3 सैनिक ही इसके लिए योग्य थे। चन्द्र सिंह ने प्रधानमंत्री नेहरु को ज्ञापन देकर मांग की कि पेशावर कांड को राष्ट्रीय पर्व समझा जाए और सैनिकों को पेंशन दी जाए, जो मर गये हैं, उनके परिवार को सहायता दी जाए।

सरकार ने उनकी मांगों को नहीं माना। नेहरु ने उन्हें बागी करार दिया। अंत में 36 सैनिकों को सरकार ने पेंशन दी, 21 को ग्रेच्युटी तथा दो को कुछ भी नहीं दिया गया। आजाद भारत के शासकों ने वीर चन्द्र सिंह गढ़वाली व देश के लिए अपने प्राणों की बाजी लगा देने वाले शहीदों को नकार दिया।

इतिहासकार रजनी पाम दत्त ने अपनी किताब आज के भारत में 20 जनवरी 1932 को सिपाहियों के प्रश्न पर फ्रांसिसी पत्रकार चार्ल्स पेत्राश को गांधी के उत्तर का उल्लेख किया है- 'वह सिपाही जो गोली चलाने से इंकार करता है, अपनी प्रतिज्ञा भंग करता है इस प्रकार वह हुक्म उदूली का अपराध करता है। मैं अफसरों और सिपाहियों से हुक्म उदूली के लिए नहीं कह सकता। जब हाथ में ताकत होगी, तब शायद मुझे भी इन्हीं सिपाहियों और अफसरों से काम लेना पड़ेगा। अगर मैं हुक्म उदूली सिखाउंगा तो मुझे भी डर लगेगा कि मेरे साथ में भी वे ऐसा ही न कर बैठेंगे।'

भारत की सरकारें पेशावर विद्रोह के बारे में जनता को बताने से हमेशा बचती रही हैं। एक तरफ देश में अटल बिहारी वाजपेयी जेसे लोग थे जो अंग्रेजों की मुखबरी करने के बाद भी देश के प्रधानमंत्री बने, तो दूसरी तरफ चन्द्र सिंह जैसे बहादुर सिपाही जिनको लेकर सरकारें आज भी डरी व सहमी हुयी हैं। सरकार देश के सुरक्षा बलों को अंग्रेजी हुकूमत की तरह ही जनता के दमन का एक अस्त्र बनाकर रखना चाहती है। देश में आज जिस तरह से सुरक्षा बलों के नाम पर राजनीति की जा रही है ऐसे में चन्द्र सिंह गढ़वाली और 1930 का पेशावर विद्रोह आज और भी ज्यादा प्रासंगिक हो गये हैं। वीर चंद्र सिंह गढ़वाली के बारे में और ज्यादा जानने के लिए उन पर लिखी राहुल सांकृत्यायन की पुस्तक 'वीर चन्द्र सिंह गढ़वाली' अवश्य पढ़ी जानी चाहिए।

भारत के आजादी के आंदोलन में उनका त्याग, समर्पण व देशप्रेम की भावना अद्भुत है। जनता के इस वास्तविक नायक को याद करने, उनसे प्रेरणा लेने के लिए 23 अप्रैल मंगलवार को बेनी विहार, पीरुमदारा रामनगर में सायं 4 बजे से एक सभा का समाजवादी लोक मंच द्वारा आयोजन किया जा रहा है।

यह सप्ताह / मौत के क्षण

एक लकड़हारा सत्तर साल का हो गया है, लकड़ियां ढोते—ढोते जिंदगी बीत गयी, कई बार सोचा कि मर क्यों न जाऊं! कई बार परमात्मा से प्रार्थना की कि हे प्रभु, मेरी मौत क्यों नहीं भेज देता, सार क्या है इस जीवन में! रोज लकड़ी कांटना, रोज लकड़ी बेचना, थक गया हूं! किसी तरह रोजी—रोटी जुटा पाता हूं। फिर भी पूरा पेट नहीं भरता। एक जून मिल जाए तो बहुत। कभी—कभी दोनों जून भी उपवास हो जाता है। कभी वर्षा ज्यादा दिन हो जाती है, लकड़ी नहीं काटने जा पाता।

एक दिन लौट रहा था थका—मादा, खांसता—खंखारता, अपने गट्ठर को लिये। और बीच में एकदम ऐसा उसे लगा कि अब बिलकुल व्यर्थ है, मेरा जीवन यह अब मैं क्यों ढो रहा हूं! उसने गट्ठर नीचे पटक दिया, आकाश की तरफ हाथ जोड़कर कहा कि मृत्यु, तू सब को आती है और मुझे नहीं आती!

कोलंबा कालीधर

हे यमदूत, तुम मुझे क्या भूल ही गये हो, उठा लो अब! संयोग की बात, ऐसा अक्सर तो होता नहीं, उस दिन हो गया, यमदूत पास से ही गुजर रहे थे—किसी को लेने जा रहे होंगे—सोचा कि बड़े हृदय से कातर होकर पुकार रहा है, तो यमदूत आ गये। उन्होंने उसके कंधे पर हाथ रखा और बोले, क्या भाई, क्या काम है? लकडहारे ने देखा, मौत सामने खड़ी है, प्राण काँप गये! कई दफे जिंदगी में बुलायी थी मौत—बुलाने का एक मजा है, जब तक आए न। अब मौत सामने खड़ी थी तो प्राण काँप गये, भूल ही गया मरने इत्यादि की बातें। बोला, कुछ नहीं, और कुछ नहीं, गट्ठर मेरा नीचे गिर गया है। यहां कोई उठाने वाला न दिखा इसलिए आपको बुलाया, जरा उठा दें और नमस्कार। कोई आने की जरूरत नहीं है और ऐसे तो हम जिंदगी-भर कहते रहते हैं मजाक था बस, मुझे मरना नहीं है। यह सिर्फ गट्ठर मेरा उठाकर मेरे सिर पर रख दें। जिस गट्ठर से परेशान था, उसी को यमदूत से उठवाकर सिर पर रख लिया। उस दिन उसकी पुलक देखते जब वह घर की तरफ आया! जवान हो गया था फिर से, बड़ा प्रसन्न था। बड़ा प्रसन्न था कि बच गये मौत से। मौत के क्षण में जीवेषणा प्रगाढ़ हो जाती है।